International Journal of Scientific Research in Science and Technology
© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 8 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

प्राचीन बिहार में पुर्नजागरणः एक खोज

प्रवीण कुमार
इतिहास विभाग
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय
मुजफ्फरपुर (बिहार)

यह सत्य है कि बिहार का इतिहास ही भारत का इतिहास प्राचीन काल में माना गया है क्योंकि प्राचीन काल में बिहार के सामाजिक और धार्मिक सुधार आंदोलन में भारतीय पुनर्जागरण की दिशा को तय किया था। पुनर्जागरण से अभिप्राय यहाँ यह है कि विभिन्न दिशाओं में नये चिंतन का प्रादुर्भाव क्योंकि उन दिनों बिहार से ही चाहे समाज के वर्ग–व्यवस्था का जाति व्यवस्था में परिवर्तित होना, आर्थिक क्षेत्र में केन्द्रीयकृत चिंतन, राजनीतिक क्षेत्र में समूहवाद से प्रभुवाद में परिवर्तन, धार्मिक क्षेत्र में वैज्ञानिक सोच की जगह अंधविश्वास का समावेश एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में सामाजिक बहुलतावादी सोच की जगह व्यक्तिपरक सोच होना आदि। प्रायः देखा गया है कि प्राचीन भारत में सामाजिक और धार्मिक सुधार का केन्द्र बिहार ही था। चाहे वह पूर्व वैदिक काल का सामाजिक व्यवस्था, राजनीतिक व्यवस्था, आर्थिक व्यवस्था, धार्मिक व्यवस्था, सांस्कृतिक व्यवस्था की पराकाष्ठा हो वहीं उत्तर वैदिक काल में बिहार की आर्थिक व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था, राजनीतिक व्यवस्था, धार्मिक व्यवस्था और सांस्कृतिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन हुए और वे परिवर्तन अवैज्ञानिक था। इस परिवर्तन के पीछे मूलतः दो तत्व काम कर रहे थे। एक लोहे का अविष्कार और दूसरा रथ और घोड़े के प्रयोग, इन दोनों ने ब्राह्मणवादी व्यवस्था को जन्म दिया। क्योंकि उत्पादन में खपत से ज्यादा उत्पादन होना एक ऐसे प्रभुवर्ग का निर्माण किया जिनकी सोच थी कि समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र में विभक्त है। जैनवाद भी कमोवेश सत्य एवं अहिंसा पर आधारित समाज को स्थापित करने का बल दिया। इसे भी कमोवेश पुनर्जागरण आंदोलन ही माना गया है। तो यह कह सकते हैं कि आखिर प्राचीन बिहार में वे तत्व विद्यमान थे, जिसने समाज में रहने वाले दीन–दुखियों का चिंता किया और इस प्रभुवर्ग ब्राह्मणवादी व्यवस्था के खिलाफ एक नई सोच पैदा की जिसने न केवल बिहार बल्कि भारतवर्ष में भी

और बाद के काल में भारत से बाहर कई देशों में इस आंदोलन को प्रसारित किया तथा विस्तारित किया।

पूर्व ऐतिहासिक बिहारः बिहार का इतिहास अतिप्राचीन है। इसकी पुष्टि पुरातात्विक अन्वेषणों में मिले एक लाख चालीस हजार वर्ष पुरातन ऐतिहासिक सामग्रियों से भी होती है। छोटानागपुर के पर्वतीय इलाकों में आदिमानव के निवास के प्रमाण मिले हैं। बिहार के विभिन्न भागों में पुरातत्विक उत्खन्नों से प्राप्त सामग्री से ऐसा प्रतीत होता है कि यहॉ संस्कृतियों का विकास विभिन्न चरणों में हुआ था–

1. आदि पूर्व पाषाण काल
2. मध्य पूर्व पाषाण काल
3. उत्तर पूर्व पाषाण काल
4. मध्य पाषाण काल
5. नव पाषाण काल
6. ताम्र पाषाण काल

बिहार में पुरातात्विक खोजों के उत्खनन से प्राप्त सबसे प्राचीन अवशेष प्रारंभिक प्रस्तर युग के हैं। ये अवशेष छोटानागपुर के रांची, सिंहभूम, हजारीबाग तथा संथाल परगना से मिले हैं जो करीब एक लाख ई. पूर्व युग के हैं। इन अवशेषों में पत्थर की कुल्हाड़ी और चाकू मिले हैं। मध्यवर्ती प्रस्तर युग का अवशेष सिंहभूम, रांची, धनबाद तथा संथाल परगना से मिला है जो लगभग एक लाख चालीस हजार ईसा पूर्व का है। इसी जगह से परवर्ती प्राचीन प्रस्तर युग का भी अवशेष प्राप्त हुआ है।

बिहार के कई स्थानों पर ऐतिहासिक शोध एवं उत्खनन से पूर्व, मध्य तथा उत्तरपाषाण काल सभी के अवशेष मिले हैं। मध्य प्रस्तर युग (9,000 से 4,000 ई. पू.) काल के अवशेष सिंहभूम, रांची, पलामू, धनबाद और संथाल परगना जिलों से उपलब्ध हुए है। इस काल के अवशेषों मे छोटे आकार के पत्थर के तेज धार और नोंक वाले औजार मिले हैं। हजारीबाग जिले के सरैया, सतपहाड़, इस्को, रहम देहांगी आदि स्थलों के उत्खनन से पुरातात्विक अवशेष प्राप्त हुए हैं। आदिमानव द्वारा पाषाण खंड पर बनाया

गया चित्र इसको से प्राप्त हुए हैं। दो प्राकृतिक गुफाओं के बारे में भी जानकारी मिली। अन्य उपलब्ध सामग्री में कुल्हाड़ी, खुरचनी, तक्षणी, फलक, बेधनी तथा बंधनी आदि मुख्य हैं जो पूर्वपाषाणकाल, मध्यपाषाणकाल और उत्तर पाषाण काल के हैं।[1]

नवपाषाण काल में पत्थर से निर्मित औजार पलामू जिला से प्राप्त हुए हैं। इन औजारों में कुल्हाड़ी, ब्लेड स्क्रेपर, बोरर और ब्यूरिम मुख्य हैं। जिन स्थलों की खुदाई से ये औजार मिले हैं वे हैं वीरबंध, बजना, मेलापूल, दुर्गावतीपूल, झाबर, शाहपुर, चंरदरपुर, रंकाकलां। पलामू जिले में भगवानपुर के निकट प्रागैतिहासिककालीन दुर्लभ शैलचित्र का पता चला है। कई प्राकृतिक गुफाएँ मिली हैं जिसमें विभिन्न पशुओं के चित्र जैसे भैंस, हिरण, शिकार के चित्र अंकित हैं।

सिंहभूम जिला के लोटा पहाड़ नामक स्थल तथा बारूडीह, इसाडीह, डुगडुंगी, फुलडुंगरी, वेबो, संरेंगा, कालिकापूर आदि स्थलों के उत्खनन से तक्षणी, शल्क, खंडक, क्रोड, विदराई, अर्द्धचंद्रकार आदि पाषाण निर्मित हथियार मिले। बारूडीह से पाषाणकालीन ऐतिहासिक अवशेष पकी मिट्टी के मटके, मृदभांड के टुकड़े, पत्थर की हथौड़ी, वलय आदि प्राप्त हुए हैं। बोनगरा के निकट बनाघाट में नवपाषाण कालीन पत्थर से बनी पॉच कुल्हाड़ियॉ, चार वलय और पत्थर की थापी, पकी मिट्टी की थापी और काले मृदभांड के टुकड़े आदि प्राप्त हुए हैं।[2]

पुरातात्विक विभाग द्वारा प्रयोग किए जाने वाले शब्द 'असुर' बिहार प्रांत के रांची, गुमला, लोहरदगा में ऐतिहासिक स्थलों के लिए प्रयोग होता है। मुख्यतः लोहा गलाने वाली और लोह के सामान तैयार करने वाली जाति के रूप में मशहूर असुर जनजाति के पूर्वज यहीं बसते थे। इन जगहों से ईटों से निर्मित प्राचीन भवन, प्राचीन पोखर, अस्थिकलश आदि अवशेष मिले हैं। अनेक पुरातात्विक अवशेष के अलावा लोहरदगा में एक कांसे का प्याला प्राप्त हुआ है जिसे असुर से संबद्ध माना जाता है। ईट की दीवार और मिट्टी के कलश तथा तांबे के औजार पांडु स्थल से प्राप्त हुए है। चार पाए वाले पत्थर की एक चौकी भी यहीं से मिली है जो अभी पटना संग्रहालय में सुरक्षित है। कुछ पुरातात्विक अवशेष रांची के नामकुम क्षेत्र से भी मिले हैं। एक अन्य स्थल मुरद से कांसे की अंगूठी और तांबे की सीकड़ी मिली है। इन अवशेषों से आदिमानव के जीवन के साक्ष्य और उसमें आने वाले क्रमिक परिवर्तन का भी संकेत मिलता है। मृदभांड और मिट्टी के बर्तन के टुकड़े से तत्कालीन भौतिक संस्कृति का भी पता चलता है।[3]

छपरा के निकट चिरंड, चेचर (वैशाली), मनेर एवं गया के बेला के निकट सोनपुर की खुदाई से प्रस्तर धातुयुगीन संस्कृति की जानकारी मिलती है। यहॉ काले एवं लाल मृदभांड, पूर्वी उत्तरी वाले चमकीले

मृदभांड एवं काले एवं, लाल रंग के चित्रित मृदभांड मिले हैं। इस तरह के प्रमाण भागलपुर, राजगीर एवं अन्य स्थानों से भी मिले है जो 1,000 ई. पूर्व तक के लगते है।

बिहार का आर्यीकरण और राज्य का निर्माण

ऐसी मान्यता है कि भारत में आर्य ईरान से आए एवं पूर्व वैदिक काल (1500 ई. पू. से 1000 ई पू.) में पंजाब हरियाणा के क्षेत्र में बसे। ऋग्वेद के श्लोकों से यह पता चलता है कि बिहार में आर्यो का निवास नहीं था। यहॉ अनार्य बसते थे तथा आर्य उन्हें हेय दृष्टि से देखते थे। ऋग्वेद में कीकट नामक एक प्रदेश की चर्चा मिलती है। जिसका शासक परमांगद था। परवर्ती कृतियों में कहीं–कहीं पर मगध के लिया कीकट का प्रयोग किया गया हैं यर्जुवेद में मगध की चर्चा है और उसे आर्य सभ्यता एवं संस्कृति से अलग माना गया हैं इसमें यहॉ के लोगों को ब्रात्य कहा गया है। अथर्ववेद के एक सूक्त में यह इच्छा व्यक्त की गई है कि ज्वर अंग एवं मगध में जाए। इससे स्पष्ट होता है कि पूर्व वैदिककाल में बिहार आर्य संस्कृति के संपर्क में नहीं था। ऐसा अनुमान किया जाता है कि अथर्ववेद की रचना के दौरान आर्यो ने बिहार के क्षेत्र में प्रवेश किया। संभवतः ब्राह्मण साहित्य एवं आरण्यकों के रचना काल में यहॉ आर्य सभ्यता संस्कृति का प्रचार प्रसार हुआ। कुछ ब्राह्मण एवं आरण्यक ग्रंथों की रचना भी इस क्षेत्र में हुई।4

ऐसा प्रतीत होता है उत्तर वैदिक काल में आर्यो का प्रसार बिहार सहित समस्त पूर्वी भारत में आरंभ हुआ। इसमें लौह प्रौद्योगिकी की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। लोह की जानकारी के बाद उन्होंने उसके औजार बनाए जिससे जंगलों की कटाई आसान हो गईं लोहे का उपयोग भारत में 1000 ई. पू. से 800 ई. पू. के मध्य प्रारंभ हुआ। जिसे श्याम या कृष्ण कहा गया है। लगभग इसी काल में गंगाघाटी क्षेत्र में आर्यो का विस्तार हुआ। 800 ई.पू. के आसपास रची गई शतपथ ब्राह्मण में आर्यो द्वारा गंगाघाटी के क्षेत्र को जलाकर और काटकार साफ करने की चर्चा है। शतपथ ब्राह्मण से पता चलता है कि कैसे अग्नि भूमि को साफ करते हुए सदानीरा अर्थात आधुनिक गंडक तक पहुॅची। इनका पीछा करते हुए आर्य प्रमुख विदेह माधव और पुरोहित गौतम राहुगम भी पहुॅचे और अग्निदेव, को सदानीरा पार करने को बाध्य किया। इस प्रकार आधुनिक गंडक से पूरब विदेह तक बिहार प्रदेश की भूमि का आर्यीकरण हुआ।[5]

छठी शताब्दी ई. पूर्व से पूर्व के बिहार के राजनीतिक इतिहास के संबंध में रामायण महाभारत एवं पुराणों से भी जानकारी मिलती हैं। इन ग्रन्थों में उत्तर बिहार में विदेह और दक्षिण बिहार में मगध की चर्चा प्रमुख रूप से आती है। ई.पू. छठी शताब्दी में यहॉ चार राज्य थे– 1. विदेह (मिथिला), 2. वैशाली, 3. अंग और 4. मगध। इन चारों के इतिहास पर नीचे प्रकाश डाला गया है।

1. विदेह मिथिला– विदेह के राजवंश की शुरूआत इच्छवाकू के पुत्र निमी विदेह से मानी जाती है, जो सूर्यवंशी थे। इसी वंश के दूसरे राजा मिथिला जनक विदेह ने मिथिला राज्य की स्थापना की। इसके पश्चात यहॉ के सभी राजाओं के नाम के साथ जनक शब्द जुड़ने लगा। इसी वंश के 25वें राजा सिरध्वज जनक थे। इसी जनक के द्वारा गोद ली गई पुत्री सीता का विवाह अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र राम के साथ हुआ था। इस वंश के प्रारंभिक खण्ड में कुन 53 राजा हुए थे।

दूसरे दौर में इस वंश में कुल 15 राजा हुए जिसमें जनक वैदेह विद्वानों के संरक्षण के लिए प्रसिद्ध था। इस वंश में करल जनक अंतिम राजा थे। छठी शताब्दी के प्रारंम्भ के समय यहॉ राजतंत्र के बदले जनतंत्र आ गया। शक्तिशाली गणराज्यों से घिरे होने के कारण इसके आसपास के राज्यों ने मिलकर एक महासंघ की स्थापना की जो पहले वज्जी संघ और बाद में लिच्छवी संघ के नाम से जाना गया। इस संघ में शामिल होने के कारण विदेह का अस्तित्व समाप्त हो गया।

2. वैशाली– वैशाली का इतिहास काफी समृद्ध रहा है। सूर्यवंश के संस्थापक इक्ष्वाकु के पुत्र विशाल ने ही वैशालिक राजवंश और ''विशाला'' के नाम से विख्यात क्षेत्र की स्थापना की थी। लंबे समय तक राजतंत्र रहने के पश्चात् ईसा पूर्व सातवीं शताब्दी के अंत के आसपास वैशाली का राजतंत्र गणतंत्र में परिवर्तित कर दिया गया। कालान्तर में स्थापित 'बज्जि महासंघ' की राजधानी बनने का गौरव भी वैशाली को ही प्राप्त हुआ।

प्राचीन काल में वैशाली भारत का प्रमुख नगर एवं लिच्छवि की राजधानी थी। जातक ग्रन्थों और तिब्बती स्रोतों के अनुसार यह नगर तीन भागों में विभक्त था– पहला, जिसमें सोने के बुर्जवाले प्रसादों की प्रधानता थी, दूसरा, जिसमें चॉदी के बुर्ज थे और तीसरा, जिसमें तॉबे तथा पीतल के बुर्ज थे। ये विभाग क्रमशः उच्च, मध्य और निम्न श्रेणी के लोगों के थे।

लिच्छवी गणराज्य में 7707 राजा, (वे संभवतः अपने–अपने क्षेत्र के अधिकारी थे और उनका संगठन लिच्छवी गणराज्य था) अनेक उपराजा, सेनापति तथा भाण्डारिक थे। लिच्छवी गणराज्य में सभी व्यक्ति खुद को राजा मानता था। विनिस्थ महामात्र व्यावहारिक और सूत्रधार (अष्टुल के अधिकारी) अपराधियों

का निर्णय करते थे और तत्पश्चात् सेनापति के पास अपराधी को दण्डार्थ भेज दिया जाता था। वहां से अपराधी उपराजा तथा राजा के पास भेजा जाता था। गौतमबुद्ध ने लिच्छवियों की सुंदर शासन–व्यवस्था की प्रशंसा मुक्त कण्ठ से की है। लिच्छवियों पर बुद्ध तथा जैन के उपदेशों का प्रभाव भी पर्याप्त पड़ा और विभिन्न राजकुमारों ने धर्म के क्षेत्र में उल्लेखनीय काम किया।[6]

3. अंग– अंग नामक राजकुमार ने इस राज्य की स्थापना की थी। मगध राज्य और राजमहल की पहाड़ियों के मध्य स्थित यह राज्य मिथिला से 60 मील दूर था। अंग के सन्दर्भ में कोई ऐसा तथ्य नहीं प्राप्त हुआ है जिससे इसके इतिहास की जानकारी मिल सके। अंग वंश का जो वर्णन पुराणों में किया गया है, उसे भी कुछ विद्वान पूरी तरह विश्वसनीय नहीं मानते हैं। हां, यह तथ्य अवश्य मिलता है कि मगध के पुनरूत्थान से सषांकित अंग नरेश दृढ़वर्मन द्वारा अपनी पुत्री का विवाह कौशाम्बी नरेश उदयन के साथ कर देने के बावजूद अंग राज्य की रक्षा नहीं हो सकी। मगध में हर्यक वंश के संस्थापक बिम्बिसार ने अंग राज्य पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया।

4. मगध– मगध राज्य की भौगोलिक स्थिति ने उसके उत्कर्ष में बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाईं। यह प्रदेश गंगा नदी के मैदान के ऊपर और नीचे के भागों में स्थित था, जिससे इसका सामरिक महत्त्व अधिक था। उपजाऊ प्रदेश और गंगा नदी के व्यापार का केन्द्र बिंदु होने के कारण इसका विकास तेजी से हुआ। यहॉ के शासकों ने पहले राजगृह को अपनी राजधानी बनाया बाद में गंगा के तट पर सुरक्षित स्थान देखकर पाटलिपुत्र को यहॉ की राजधानी बनाया गया। ये दोनों ही राजधानी अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण बहुत ही सुरक्षित प्रदेश थे। समृद्ध क्षेत्र होने के कारण मगध के शासकों को एक विशाल शक्तिशाली सेना रखने में मदद मिली। लेकिन सिर्फ प्राकृतिक साधनों से किसी देश का विकास नहीं होता। उसकी उन्नति वहॉ के निवासियों की उच्चाकांक्षाओं और भावनाओं पर निर्भर करती है। मगध में भी ऐसा ही हुआ। मगध के राजाओं ने योग्य व्यक्तियों को अपना मंत्री चुना और अच्छा प्रशासन स्थापित किया। मगध के भाट–चारणों ने भी जनता को प्रोत्साहित किया। फलस्वरूप मगध राज्य तत्कालीन भारत का सबसे शक्ति सम्पन्न राज्य बन गया।

उस समय अंग और मगध राज्य एक–दूसरे को पराजित करने के लिए कूटनीतिज्ञों के प्रयोग से पीछे नहीं रहते थे। चम्पा नदी इन दोनों राज्यों के मध्य थी। कभी मगध अंग को पराजित करता था तो कभी अंग मगध पर आधिपत्य जमा लेता था। इसी तरह काशी और कोशल राज्य के मध्य सदा संघर्ष चलता रहता था। जिस तरह मगध ने अंग पर कब्जा कर लिया था, उसी प्रकार महाकोशल ने सदा के लिए

काशी को कोशल राज्य में मिला लिया था, उसमें मुख्य रूप से कोशल, वत्स, अवंती और मगध के शासकगण सक्रिय रूप से भाग ले रहे थे। सब–के–सब अपने–अपने अस्तित्व को मजबूत करने में लगे हुए थे और अपने–अपने राज्य के नेतृत्व में भार के इतिहास लम्बी अवधि के बाद एक युग का आरंभ हुआ जिसे मगध के उत्कर्ष के नाम से जानते हैं।[7]

मगध को वैदिक साहित्य की दृष्टि से अपवित्र स्थान माना गया है। इसका कारण संभवतः यह था कि आर्यों के सांस्कृतिक प्रभाव से मगध काफी दिनों तक बाहर रहा और मगध के निवासियों को लोग व्रात्य (पतित) कहा करते थे। ये लोग आर्य थे या अनार्य, यह कहना सही नहीं है; परन्तु इतना निश्चित है कि ये लोग वेदसम्मत सभ्यता को नहीं मानते थे। ई. पू. छठी शताब्दी के पूर्व मगध में बार्हद्रधवंश का शासन था और इसकी राजधानी राजगृह या गिरव्रज में थी। गौतम बुद्ध के दौर में इसी वंश का शासक बिम्बिसार मगध राज्य पर शासन कर रहा था। बृहद्रथ का पुत्र जरासंध शक्तिशाली शासक था। इस कुल की समाप्ति कैसे हुई इसका कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। ई.पू. छठी शताब्दी में हम मगध में हर्यककुल का शासन देखते हैं। बुद्ध के समय इसी वंश का शासक बिम्बिसार मगध में राज्य कर रहा था।

वृहद्रथ वंश– अन्य तीन राजतंत्रों में मगध सबसे शक्तिशाली थी। पुराण हमें मगध के बहुत–से–राज्यों के उत्थान तथा पतन के बारे में बताते हैं। मगध की राजनीतिक सत्ता वृहद्रथ ने स्थापित की। वृहद्रथ वंश का संस्थापक वृहद्रथ माना जाता है। जरासंध ने अपने बाहुबल से विभिन्न छोटे–बड़े राज्यों को जीतकर एक विशाल साम्राज्य स्थापित किया। पाण्डवों के विरोध के कारण वह इस कार्य में सफल नहीं हो सका और मल्लयुद्ध में भीम द्वरा मारा गया। उसकी मृत्यु के उपरांत उसका पुत्र वासुदेव मगध की गद्दी पर बैठा। इस वंश का अंतिम राजा निपुंजय था। इस तरह वृहद्रथ वंश का पतन हो गया। उसके मंत्री पुलिक ने उसकी हत्या करवाकर अपने पुत्र को मगध के सिंहासन पर बैठा दिया।

हर्यक वंश–इसका अस्तित्व बहुत कम दिनों तक रहा। भट्टीय नामक एक वीर महात्वाकांक्षी पुलक के पुत्र का वध कराकर अपने पुत्र बिम्बिसार को मगध के सिंहासन पर बैठा दिया। इस समय बिम्बिसार लगभग 543 ईसा पूर्व मगध के सिंहासन पर बैठा था। जिस राजवंश की स्थापना बिम्बिसार ने की उसे हर्यक राजवंश कहा जाता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि प्राचीन बिहार में प्रादेशिक स्तर पर समय–समय पर पुनर्जागरण आंदोलन हुए जबकि उसी के समानांतर बिहार के अंदर कई आँचलिक पुनर्जागरण भी हो रहे थे जिसका मुख्य उद्देश्य बिहार की गरिमा को बढ़ाना था।

संदर्भ सूचीः–

1. कौलेश्वर राय, बिहार का इतिहास, पटना, 2001, पृ. 11–19।

2ण उपरोक्त।

3ण उपरोक्त।

4ण राजेश्वर प्रसाद सिंह, बिहार अतीत के झरोखे से, दिल्ली, 1986, पृ. 33।

5ण उपरोक्त।

6ण उपरोक्त, पृ. 37–41।

7ण उपरोक्त।